RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-08
August-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

भारत में महिलाओं की स्थिति वैदिक काल के संदर्भ में – एक अध्ययन

डॉ. राजकुमार सिंह बोलिया

सह–आचार्य, समाजशास्त्र, मा.ला.व.रा. महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.)

प्रस्तावना :

महिला और पुरूष सृष्टि के निर्माता ईश्वर की दो अनोखी एवं विचित्र उपज है, पैदाइश है। विपरीत योनि के होते हुए भी दोनों एक दूसरे के लिए अपरिहार्य हैं। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों के सहयोग से ही सृष्टि की निरन्तरता बनी रहती है। समाज में महिलाओं की स्थिति कैसी है ? क्या समाज उन्हें पुरूषों के समान ही दर्जा प्रदान करता है ? प्राचीन समय में भारत में स्त्रियों की स्थिति कैसी थी ? स्त्रियों को क्या उचित सम्मान प्राप्त था ? आदि ऐसे अनेक प्रश्न हैं जिनको हम जानने का प्रयास करेगें।

स्थिति :

स्थिति शब्द सामान्य भाषा में प्रायः प्रयोग में आने वाला शब्द है। समाज में प्रत्येक व्यक्ति की अपनी–अपनी स्थिति होती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्थिति को उन्नत करना चाहता है, उसे बढ़ाना चाहता है। ऑगबर्न एवं निमकॉफ के अनुसार ''स्थिति शब्द की सबसे सरल परिभाषा यह है कि यह समूह में व्यक्ति के स्थान को बताती है।'' मार्टिन्डेल के अनुसार स्थिति ''सामाजिक झुण्ड में एक स्थान है जिसका परिज्ञान आदर के प्रतीकों एवं कार्यों के स्वरूपों से किया जाता है।'' स्थिति व्यक्तियों की अपनी विशिष्ट भूमिकाओं एवं पदों पर सफलताओं एवं असफलताओं का परिणाम है। इस तरह स्पष्ट है कि स्थिति किसी व्यक्ति का समूह में या समूह की समुदाय में पदवी या प्रतिष्ठा होती है। स्थिति वह पद होता है, जिसमें कोई व्यक्ति या समूह जनता में आदर, सम्मान प्राप्त करता है। यह एक तुलनात्मक विचार होता है। एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति से या एक समूह की दूसरे समूह से तुलना करके ही उस व्यक्ति या समूह की स्थिति का अन्दाज लगाया जा सकता है।

महिलाओं की स्थिति से तात्पर्य है कि किसी समाज में पुरूषों की तुलना में उनकी दशा कैसी है ? समाज में उनका स्थान क्या है ? स्त्री एवं पुरूषों के सम्बन्धों का आधार क्या है ? स्त्रियों एवं पुरूषों के मध्य श्रम विभाजन का क्या आधार है ? इन सबके आधार पर उत्पन्न पुरूष एवं स्त्री के सम्बन्धों की दशा को स्त्रियों की स्थिति कहा जा सकता है। महिलाओं की स्थिति का निर्धारण प्रत्येक समाज की तत्कालीन परिस्थितियों एवं संस्कृति के द्वारा होता है। समाज की परिस्थितियों एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों के अनुसार स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन होता रहता है।

वैदिककाल में महिलाओं की पिता एवं पति के परिवार में स्थिति :

प्राचीनकाल में सभी पितृसत्तात्मक समाजों में लड़कियों के जन्म का सामान्यतः कम स्वागत होता था। सभी स्थानों पर पुत्र को लड़कियों की अपेक्षा अधिक महत्व प्रदान किया जाता था। फिर भी लड़कियों का जन्म भयप्रद या बहुत खतरनाक नहीं माना जाता था। दूसरी तरफ प्रारंभिक उपनिषद्रों में से एक में उन अनुष्ठानों का वर्णन किया गया है जिसको करके एक विदुषी कन्या की प्राप्ति की जा सके। यद्यपि यह सच है कि ऐसे अनुष्ठान उतने प्रचलित नहीं हुए जितना की पुम्सावना संस्कार जो पुत्र की उत्पति के लिये किया जाता है। फिर भी यह स्पष्टतः प्रकट होता है कि सुसंस्कृत माता–पिता, पुत्री के लिये भी उतने ही उत्सुक रहते थे जितने की पुत्र के जन्म के लिये। अनेक विचारकों का मत था कि एक सुसंस्कृत, अच्छा व्यवहार करने वाली कन्या को लड़कों से भी अच्छा समझा जाता था। ऐसी लड़की परिवार के गर्व का विषय थी। पिता के परिवार में कन्या को भी पुत्र के समान ही समझा जाता था उसे अच्छी शिक्षा दिलवाकर अच्छे व योग्य वर के साथ उसका विवाह किया जाता था। पिता के परिवार से भी अधिक अच्छी स्थिति महिलाओं की उनके पतियों के घर पर रहती थी। अविवाहित महिलाओं से भी अच्छी स्थिति विवाहित महिलाओं की मानी जाती थी। पति के घर पर उसे अधिक सम्मान दिया जाता था। पति के साथ ही वह घर की संयुक्त अधिकारिणी थी। गृहस्थी के कार्यों का संचालन दोनों की सम्मिलित राय से होता था। दोनों को इसलिए संयुक्त रूप से दम्पत्ति के नाम से पुकारा जाता था। एक गृहिणी के रूप में महिला को महत्वपूर्ण कार्यों का उत्तरदायित्व सौंपा जाता था। उनके सुपुर्द निवास स्थान की सफाई का कार्य, भोजन का कार्य, अतिथि सत्कार का प्रमुख कार्य था। अपनी संतानों को राष्ट्र का योग्य नागरिक बनाने के लिए उनकी उचित देखभाल का कार्य महिलाओं पर ही था। घर के वस्त्र, आभूषण व अन्य सामग्रियों की देखभाल तथा उन्हें उचित स्थान पर रखने

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

आदि का उत्तरदायित्व महिलाओं पर ही था। दूसरे शब्दों में हम उन्हें घर की स्वामिनी कह सकते हैं। इसीलिये उन्हें गृह स्वामिनी कहा जाता था। घरेलु दुनिया की वह मुख्य केन्द्र थी, वह अपने घर की साम्राज्ञी थी। महिलाओं को समृद्धि की देवी समझा जाता था और कहा जाता था कि जो व्यक्ति उन्नति व समृद्धि का इच्छुक है उसे उनका सम्मान करना चाहिये। अथर्ववेद में नव वधू को सम्बोधित करते हुए कहा गया है ''हे नव वधू तू जिस नये घर में प्रवेश कर रही है उस घर की तू साम्राज्ञी है। यह राज्य तेरा है। तेरे श्वसुर, देवर, ननंद और सास तुझे साम्राज्ञी समझ आनन्दित रहें।'' इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वैदिक काल में पति के घर पर भी स्त्री को सम्पूर्ण सम्मान प्रदान किया जाता था। धार्मिक कार्य में तो महिलाओं का विशेष महत्व था। कोई भी धार्मिक कार्य पति बिना पत्नी की सहायता के नहीं कर सकता था। ऐसा माना जाता था कि अविवाहित व्यक्ति द्वारा दिया गया भोग ईश्वर भी स्वीकार नहीं करते थे।

शैक्षणिक दृष्टिकोण से महिलाओं की स्थिति :

वैदिक काल में ऐसा माना जाता रहा है कि लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने का भी अधिकार प्राप्त था। कन्या को विदुषी बनाना माता–पिता का कर्तव्य था। कुंवारी कन्याओं को शिक्षा प्राप्त करने तथा ज्ञान की विविध शाखाओं के अध्ययन के लिये समान अवसर प्रदान किये जाते थे। उन्हें घरेलु कार्यों के अतिरिक्त ललित कलाओं आदि में भी निपुण किया जाता था। वैदिक काल में धार्मिक सभाएं हुआ करती थी। धर्मशास्त्रों पर वाद–विवाद हुआ करते थे। ऐसे वाद–विवादों में उस समय प्रसिद्ध दार्शनिक भाग लिया करते थे। उस समय के आठ प्रसिद्ध दार्शनिकों में से एक महिला दार्शनिक थी – ब्रह्मवादिनी गार्गी। अथर्ववेद में लिखा है कि एक महिला अपने वैवाहिक जीवन को सफल बना सकती है, यदि उसे उसके विद्याध्ययनकाल में उचित प्रशिक्षण दिया गया हो। कन्याओं को विद्याध्ययन के लिये आठ से दस वर्ष मिला करते थे। जिनमें वे वेदों के मंत्रों को कंठस्थ किया करती थी। उन मंत्रों में ऐसे मंत्र भी हुआ करते थे जो नित्य की प्रार्थना के लिये उपयोग में लाए जाते थे। उन्हें उन मंत्रों को भी कंठस्थ करा दिया जाता था, जो उनके विवाह के पश्चात् पति के साथ किये जाने वाले संस्कारों में सक्रिय भाग लेते समय उनके उपयोग में काम आते थे। महिला विद्यार्थियां को दो भागों में विभक्त किया जाता था ब्रह्मवादिनी और सहयोद्धा। ब्रह्मवादिनी जीवन पर्यन्त धर्मशास्त्रों व दर्शनशास्त्र की विद्यार्थी हुआ करती थी। सहयोद्धा अपने विवाह के समय तक यानि 15 से 16 वर्षों की आयु तक। ब्रह्मवादिनी बहुत ही उच्च शिक्षित व विद्वान हुआ करती थी। वे कई विद्याओं में निपुण होती थी। धार्मिक वाद–विवादों में भाग लेती थी। ऐसी महिलाओं को विदुषी, आचार्या, पंडिता आदि नामों से पुकारा जाता था। वैदिक काल में महिलाऐं कृषि कार्य, तीर कमान बनाने, युद्ध सामग्री के निर्माण में सक्रिय भाग लेती थी। रंगाई, एम्ब्रायडरी, टोकरी निर्माण के साथ–साथ शिक्षण के महत्वपूर्ण कार्यों में भी संलग्न हुआ करती थी। महिलाएं चिकित्सा का कार्य भी किया करती थी। रूसा नामक एक महिला ने ''दाई की कला'' पर एक पुस्तक भी लिखी थी।

महिलाओं को संगीत व नृत्य की शिक्षा भी दी जाती थी। जो महिलाएं गा सकती थी व नृत्य कर सकती थी, उन्हें अधिक सम्मान एवं प्रशंसा मिलती थी। वैदिक काल में यह धारणा थी कि पत्नी को इतनी शिक्षित होना चाहिये कि वह वैदिक संस्कारों एवं धार्मिक महत्व के अनुष्ठानों में भाग ले सके । अशिक्षित पत्नी पति के लिए उपयुक्त नहीं होती थी। शिक्षित कुमारियों को ''विदुषी'' कहा जाता था । ऐसी विदुषियों का विवाह भी उन्हीं के समान योग्य पुरूषों से, जिन्हें ''मनीषी'' कहा जाता था, होता था। कई विदुषी महिलाओं के श्लोक वेदों में पाए जाते थे।

वैवाहिक अधिकारों के दृष्टिकोण से महिलाओं की स्थिति :

वैदिक काल में महिलाओं का विवाह करना अनिवार्य था। पति के चुनाव में उनकी सहमति का सम्मान किया जाता था। स्वयंवर की प्रथा से भी यह स्पष्ट होता है कि लड़की को अपना जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्रता थी। अपनी बहन का विवाह एक योग्य वर से करना भाई का कर्तव्य हुआ करता था। सन्तानोत्पति प्रत्येक स्त्री का विशिष्ट कार्य माना जाता था। बाल विवाह वैदिक काल में नहीं हुआ करते थे। विधवा विवाहों की छूट का उल्लेख यद्यपि नहीं मिलता है, परन्तु सती प्रथा उस समय नहीं थी। विधवाओं के साथ मानवीय व्यवहार किया जाता था। उन्हें अपने पति की सम्पति में अधिकार प्राप्त था। उस समय दहेज प्रथा नहीं थी।

पति एवं पत्नी के सम्बन्धों के दृष्टिकोण से महिलाओं की स्थितिः

पत्नी को वैदिक काल में पति की सम्पति नहीं माना जाता था वरन् दोनों मिलकर दम्पति कहलाते थे। पति पत्नी का सम्बन्ध जीवन पर्यन्त का साथ माना जाता था। दम्पति को अटूट जोड़े के रूप में मान्यता प्राप्त थी। ऐसी भी मान्यता थी कि एक व्यक्ति को तब तक अपूर्ण माना जाता था जब तक कि वह अविवाहित रहता था। विवाह के पश्चात पत्नी के आने पर वह पूर्ण माना जाता था। महाभारत में लिखा है ''वही आदमी पूर्णता प्राप्त करता है जो अपनी पत्नी व बच्चों के साथ रहता है।'' पत्नी अपने पति की अर्द्धांगिनी कही जाती थी। पाणिग्रहण,

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

सप्तपदी आदि संस्कार पति एवं पत्नी के समानता एवं मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के प्रतीक थे। पत्नी पति की दासी नहीं समझी जाती थी । वह उसकी साथी, मित्र कहलाती थी। वह उसके जीवन का अभिन्न अंग समझी जाती थी। पत्नी पति के कार्यो में सहयोगिनी के रूप में देखी जाती थी। धार्मिक कार्यो में वह पति की सहधर्मचारिणी थी। पत्नी को अपने पति की अनुपस्थिति में उसकी अनुमति के बिना भी सामान्य सम्पति से दान आदि देने का अधिकार था।

निष्कर्ष –

अंत में हम कह सकते है कि वैदिककाल में महिलाओं को समान एवं महत्वपूर्ण सामाजिक स्थिति प्राप्त थी। महिलाओं को भी पुरूष के उत्तरदायित्वों एवं घरेलू कर्तव्यों में समान रूप से सहभागी माना जाता था। सार्वजनिक जीवन में भी महिलाएं महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया करती थी। वे सभाओं में भाग लिया करती थी। महिलाओं की स्थिति सामान्यतः पुरूषों की स्थिति से अधिक भिन्न नहीं थी यानि वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति पुरूषों के समान ही थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. Ogburn And Nimkoff (1964) - "A Hand Book of Sociology", Routledge & K. Paul
2. Martindale And Monachesi (1951) - "Elements of Sociology", Harper and Brothers, New York.
3. Dr A.S. Altekar (1956) - "The Position of Women in Hindu Civilisation", The Culture Publication House, Bhu
4. K.M. Kapadia (1966) - "Marriage and Family in India", Oxford University Press, Bombay
5. P.H. Prabhu (1961) - "Hindu Social Organization", Popular Book Depot, Bombay
6. Nilakshi Sen Gupta (1965) - "Evolution of Hindu Marriage", Popular Prakashan, Bombay
7. Prof. Indra (1955) - "Status of Women in Ancient India", Motilal Banarsi Dass

© RRIJM 2015, All Rights Reserved